हम को तो प्रतिभासता नहीं। तेरी दृष्टि में शल्य है तो भासता है। समझ में आया? रोटी बिना स्त्री बिना पकती नहीं, किसको भासता है? आचार्य कहते हैं, हमको तो ऐसा भासित नहीं होता। रोटी रोटी से पकती है ऐसा हमको भासता है। बड़ी बात भाई! समझ में आया?

मुमुक्षु :-- कुम्हार घड़ा बनाता है ऐसा तो दुनिया कहती है।

उत्तर :-- वह तो लोगों की बात है। बराबर है। यह तो अलौकिक बात बतानी है। और कुम्हार घड़े का बनाता है वह नयाभास है, नय ही नहीं है। पंचाध्यायी कहता है कि वह नय नहीं है। व्यवहारनय भी नहीं, वह तो नयाभास है। वह समझाना है वीतराग को? त्रिलोकनाथ सर्वज्ञ परमात्मा जिसने अपूर्व बात अपूर्व सर्वज्ञपद (प्रगट किया, उनको) ऐसी बात बतानी है कि कुम्हार घड़ा करता है, स्त्री रोटी बनाती है। ऐसा तो बालक से लेकर सब मानते हैं। कुम्हार जैसा मानते हैं। कुम्हार माने तो कुम्हार जैसा माने कि हमारे बिना पर में होता नहीं। ऐसा कारण-कार्य को लगाना (मिथ्यात्व है)। समझ में आया?

'**किसी को किसी में मिलाकर निरूपण करता है..**' लो, सब में लेना। '**सो ऐसे ही श्रद्धान से मिथ्यात्व है,...**' ऐसी श्रद्धान करने से मिथ्यात्व है। एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का, दूसरा द्रव्य इस द्रव्य का, एक भाव दूसरे में, वह भाव यहाँ, इस कारण से यहाँ कार्य (हुआ), यह कार्य इस कारण से (हुआ), कर्म का निमित्त से विकार हुआ और कर्म मार्ग दे तो क्षायिकभाव हो। आता है, पंचास्तिकाय में आता है। कर्मजन्य चार भाव है--उदय, उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक, लो। कर्म बिना नहीं होता। वह तो व्यवहारनय का कथन है। अपनी पर्याय से होता है तब निमित्त कौन था उसका ज्ञान कराया है। ऐसे कर्म से मान ले तो मिथ्यात्व है। विशेष कहेंगे...

(श्रोता :-- प्रमाण वचन गुरुदेव!)

सोमवार, दि. २०-८-१९५४,
सातवाँ अधिकार, प्रवचन नं. १२

यह मोक्षमार्गप्रकाशक, उसका सातवाँ अध्याय चलता है। उसमें यहाँ आया, देखो! व्यवहारनय और निश्चयनय को समझे बिना या तो एकान्त निश्चय का अवलम्बन करते

हैं अथवा एकान्त व्यवहार का अवलम्बन करते हैं। निश्चय का क्या स्वरूप और व्यवहार का क्या स्वरूप (यह) जाने बेना, हम दोनों नय का अवलम्बन करते हैं, लेकिन दोनों नय का स्वरूप जानता नहीं तो उसको भी मिथ्यादृष्टि कहते हैं। आखिर में आया व्यवहारनय। आया न व्यवहारनय?

व्यवहारनय परद्रव्याश्रित कथन करनेवाली नय है। वह एक द्रव्य को अन्य द्रव्यरूप कहती है। अन्य द्रव्य को स्वद्रव्यरूप कहती है। यह आत्मा शरीररूप है, ऐसा व्यवहारनय कहती है। यह शरीर, कहते हैं न, यह मनुष्य का शरीर, देव का शरीर, यह शरीर जीव का शरीर ऐसा कहते हैं कि नहीं?

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- शरीर कहा न। जीव का शरीर, पाँच शरीर, उसकी छः पर्याप्ति। जीव की छः पर्याप्ति, जीव का मन, जीव की वाणी ऐसा कहते हैं कि नहीं? व्यवहारनय एक द्रव्य को दूसरे द्रव्य में मिलाकर कहती है। ऐसी मान्यता करना वह मिथ्यादृष्टि है। समझ में आया? और एक भाव को दूसरे भावरूप कहती है।

'**उनके भावों को...**' अपना विकार भाव या धर्म भाव पर का है, पर के कारण से प्रगट होता है। कर्म का नाश हो तो आत्मा को मोक्ष होता है। दर्शनमोह नाश हो तो आत्मा को सम्यग्दर्शन होता है। एक भाव के कारण दूसरा भाव में लगा देता है। वह मिथ्यादृष्टि है। जैसा व्यवहारनय कहती है ऐसी मान्यता करना मिथ्यात्व है। अब ऐसा क्यों कहा, वह प्रश्न करेगा। क्यों कहा? कथन पद्धति, व्यवहारनय की ऐसी कथनपद्धति चलती है। यह गड़बड़ है न वर्तमान में। ये शास्त्र में लिखा, देखो! ये शास्त्र में लिखा। कर्म आत्मा को ले जाते हैं। नर्क, स्वर्ग में कर्म ले जाते हैं। आता है कि नहीं? क्या कर्म की पर्याय परभाव आत्मा के भाव की पर्याय को ले जाये ऐसा कभी बने नहीं। लेकिन व्यवहारनय ऐसा कहती है कि कर्म के कारण से नर्क में जाना पड़े, कर्म के कारण स्वर्ग में जाना पड़े। व्यवहारनय एक भाव को दूसरे भाव में (मिलाकर) कहती है। उसको ऐसे मानना मिथ्यादृष्टि है। उसको धर्म की खबर नहीं।

'**व कारणकार्यादिक को किसी को किसी में मिलाकर निरूपण करता है,...**' एक कारण से दूसरे में कार्य होता है, धर्मास्तिकाय के कारण आत्मा में गति होती है, अधर्मास्तिकाय के कारण आत्मा में स्थिरता होती है, धर्मास्ति नहीं है तो सिद्ध को मोक्ष में रुकना पड़ा है। समझ में आया?

मुमुक्षु :-- यही कहते हैं।

उत्तर :-- यही कहते हैं, हाँ।

व्यवहारनय कहती है कि दूसरे द्रव्य के कारण से दूसरे द्रव्य में कार्य होता है, वह कथन व्यवहार का है। ऐसे मानना वह मिथ्यादृष्टि है। तो कहा क्यों? निमित्त का ज्ञान कराने की बात की है, दूसरा कोई हेतु है नहीं। उससे कार्य होता है ऐसा कहने में कारण है ही नहीं। समझ में आया? निमित्त बिना उपादान में कार्य नहीं होता, निमित्त का कारण बिना नैमित्तिक कार्य नहीं होता। वह भी व्यवहारनय का वचन है। ऐसा है नहीं। मात्र नैमित्तिक अपनी पर्याय, जड़ चैतन्य की पर्याय होती है तब निमित्त संयोग कौन था उसका ज्ञान कराने को कहने में आया, दूसरा कोई प्रयोजन है नहीं। समझ में आया?

'**ऐसे ही श्रद्धान से मिथ्यात्व है;...**' लोगों को ऐसा लगता है कि व्यवहारनय से शास्त्र में चला और ऐसी श्रद्धा से मिथ्यात्व है? तो कहा क्यों? टोडरमल ऐसा क्यों कहते हैं? शास्त्र में लिखा है कि ऐसा होता है। उसका कारण-कार्य दूसरे के कारण-कार्य से मानना मिथ्यात्व है। शास्त्र में तो बहुत चलता है। सुन तो सही। कोई भी द्रव्य की पर्याय का कार्य अपने से ही है, पर से होता नहीं। वह तो निमित्त का ज्ञान कराने को दूसरे से होता है ऐसा व्यवहारनय, इतना छल देखकर, छल देखकर निमित्त की उपस्थिति का छल देखकर उससे हुआ ऐसा कहती है। ऐसे मानना वह मिथ्यात्व का भाव है। वस्तु का स्वरूप ऐसा है नहीं।

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- छल है, पुरुषार्थसिद्धि में कहा है। व्यवहारनय थोड़ी-सी अपनी अपेक्षा जहाँ देखे तो घोड़ा हो जाये। घोड़ा हो जाये समझे? शेठी! क्या कहते हैं तुम्हारे में? मालिक हो जाये। घोड़ा हो जाये माने क्या?

एक द्रव्य की, दूसरे द्रव्य की पर्याय में कथंचित् यदि निमित्त का अधिकार चला इतना छल देखकर उससे कार्य होता है ऐसा व्यवहारनय पुकारती है। ऐसी श्रद्धा करना वह वीतराग के मार्ग से विरुद्ध है। कहा है वीतराग ने व्यवहारनय को, लेकिन व्यवहारनय का कथन सत्यार्थ नहीं, फक्त निमित्त देखकर ऐसा कथन करने में आता है। यह बड़ी गड़बड़ी उसमें चली है। क्यों देवीलालजी?

भगवान है तो आत्मा का शुभ भाव होता है, मूर्ति है तो शुभ भाव होता है, यात्रा करने को जाते हैं तो वहाँ बाहुबलीजी देखने से यहाँ शुभ भाव आह्लाद आता है, उसके भाव से यहाँ राग आया। उस कारण से यहाँ कार्य हुआ।

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- घर बैठे-बैठे परिणाम (ऐसे) रहे? शेठी! जयपुर में घर में बैठे मकान बनाने में ध्यान रखे, वहाँ वह परिणाम होता है? ऐसा कहते थे, एक श्वेतांबर आये

थे अन्दर। बहुत साल पहले की बात है। आपने यह नया कहाँ-से निकाला? हमारा जैसा चलता था, चलता था। एक लोहे का सलिया मार सके ऐसा चलता था, आप कहते हो, मार सके नहीं। ऐसा कहाँ-से.. समझे न? निकाला। क्या कहते हैं? विरमगाम में था न? कस्टम, कस्टम खाते का एक अधिकारी थे, श्वेतांबर। फिर यहाँ आये थे। व्याख्यान सुना, व्याख्यान अच्छा लगा, लेकिन अन्दर आकर दूसरी बात कहने लगे कि, लकड़ी से मारना, आप कहते हो कि मार सकता नहीं। चलते हुए पंथ में ऐसा कहाँ-से निकाला आपने? लक्ष्मीचंदजी! कौन निकाले? है ऐसा है। निकाले कौन और छोड़े कौन? ऐसा कहाँ-से निकाला? नहीं मार सकते? प्रत्यक्ष है। भगवान का दर्शन (करने को) सिद्धगिरी जाते हैं, हमारे परिणाम कितने उज्जवल होते हैं। यहाँ बैठकर उज्जवल होते हैं? शेठी! अरे.. भगवान! वहाँ भी परिणाम का--पर्याय का काल है और करते हो तो होता है, कहीं भगवान की मूर्ति से, बाहुबलीजी से होता है, ऐसा है नहीं। लेकिन कथन व्यवहारनय का ऐसा (आता है कि) ओहो..! भगवान को देखकर, उपशांतरस देखकर अपना भी भाव ऐसा होता है, ऐसा कथन में आवे। समयसार में आया न? समयसार में जयचंद्र पंडित ने लिखा है, भगवान की मूर्ति देखकर, भगवान शांत (हैं), अपना भी भाव शांत हो जाता है। लेकिन उससे होता है? वह तो व्यवहारनय का कथन है। अपनी पर्याय अपने से हुई, निमित्त का आरोप करके उससे हुआ ऐसा कहने में आता है। ऐसा मान ले कि उससे हुआ तो मिथ्याश्रद्धा है, श्रद्धा में बड़ी विपरीतता है। कहो, समझ में आया?

'**निश्चयनय उन्हीं को यथावत् निरूपण करता है,...**' लो, निश्चयनय उन्हीं को अर्थात् स्वद्रव्य और परद्रव्य में, एक भाव को दूसरे भाव में, एक कारण को दूसरे कारण में (जोड़ता नहीं), '**निश्चयनय उन्हीं को यथावत् निरूपण करता है,...**' जैसा है वैसा कहती है। '**किसी को किसी में नहीं मिलाता है...**' किसी को किसी में, उससे वह होता है और उससे वह होता है, ऐसा न किया तो ऐसा होता है और ऐसा किया तो ऐसा हुआ, यह निश्चयनय कहती नहीं। यथावत् अपनी पर्याय अपने से होती है, पर की पर्याय पर से होती है। जैसा वस्तु का स्वरूप है ऐसा निश्चयनय कथन करती है।

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- निश्चयनय उसे कहाँ था? उसे तो अन्दर आये और ऐसा किया। भगवान को देखकर, सिद्धगिरी के दर्शन करके हमारे परिणाम कैसे होते हैं! कहा, वहाँ परिणाम करनेवाला कौन है? परिणाम कनरेवाला कौन? क्या सिद्धगिरी से हुआ है? शेत्रुंजय से हुआ है परिणाम? क्या है? शेठी!

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- हाँ, थोड़ा बोलो तो सही, मालूम तो पड़े। असर-फसर कैसी? वह तो परवस्तु है। उसकी असर वहाँ। वस्तु के स्वरूप में है नहीं।

मुमुक्षु :-- हमारी कमज़ोरी है।

उत्तर :-- कमज़ोरी तो अपनी पर्याय का कारण है, अपने कारण से है, पर के कारण से है नहीं। जयपुर में परिणाम होता है और बाहुबलीजी के (समीप) परिणाम होता है वह तो अपना परिणाम अपने कारण से हुआ है। क्या पर के कारण से हुआ है? बाहुबलीजी से हुआ है, ऐसा नहीं। ओहो..! समवसरण में जाते हैं तो कोई सम्यग्दर्शन पाता है, कोई मिथ्यादृष्टि रहता है, भगवान तो है निमित्त। क्या किया? निमित्त से क्या हुआ? बोलने में ऐसा आवे।

मुमुक्षु :-- अंतरंग कारण।

उत्तर :-- अंतरंग कारण। एक ने ऐसा कहा कि, उसे अंतरंग कारण दर्शनमोह का विघ्न था। दर्शनमोह का कारण था इसलिये भगवान के पास सम्यग्दर्शन प्राप्त नहीं किया। दर्शनमोह तो परवस्तु है। परवस्तु के कारण में अपने कार्य की मिथ्याश्रद्धा कार्य ऐसा वस्तु का स्वरूप है नहीं। मिथ्याश्रद्धा अपनी अपने से की है तो उसको कर्म को निमित्त कहने में आया। दूसरे से कार्य होता है (ऐसा) तीन काल तीन लोक में होता नहीं। बोलने में ऐसा आवे कि अहो..! तीर्थंकर भगवान का पुण्य... समझ में आया? समझ में आया?

निश्चयनय है वह जैसा स्वरूप है वैसा कहती है। जैसे कि परजीव का बचना हुआ, परजीव का संयोग, जीवसंयोग से छूटा नहीं और बचना हुआ तो जिसकी दया का भाव था उससे बचाया ऐसा कहने में आता है। ऐसा है नहीं। क्योंकि परद्रव्य की पर्याय का बचना और जीना उसके कारण से है। और दूसरे ने बचाया, दूसरे ने मार डाला ऐसा कहना वह व्यवहारनय का कथन है, ऐसा मान ले तो मिथ्यादृष्टि है, मूढ है, उसको तत्त्व की दृष्टि से बड़ी विपरीतता मान्यता में है। देवीलालजी! कहते हैं कि, देखो! हमने पाँच हज़ार दिये तो इन सब का निर्वाह हो गया। लो, बोलने में ऐसा आता है। प्राणभाई! ये दुष्काल में गरीब आदमी को मैंने पचास हज़ार दिये, ... गरीब आदमी किसान भी सेठ को ऐसा कहे कि सेठ! बड़ा दुष्काल था, आपने मदद की तो हमारे छः, आठ महिने निकल गये। क्या पर से निकलता है? शेठी! सब पर शून्य रख दो। परद्रव्य के कारण से हमारी दुष्काल की पर्याय बीती और निर्वाह हुआ वह व्यवहारनय पर के कारण से पर में कार्य कहती है। वैसा माने तो मिथ्यादृष्टि है। बड़ा पाप है, क़साईखाना करनेवाले से भी उसका बड़ा पाप है। ओहोहो..!

जगत को यह पाप, मिथ्यात्व का पाप (का) जोर है, इस बात की गिनती नहीं है और राग और द्वेष, हिंसा और झूठ का ऐसा भाव किया, वह तो साधारण पत्ते है, सुन तो सही। समझ में आया?

विपरीत मान्यता, वास्तविक तत्त्व सर्वज्ञ भगवान त्रिलोकनाथ तीर्थंकर देवाधिदेव, जिसने एक सेकण्ड के असंख्य भाग में तीन काल तीन लोक देखा। उसकी वाणी में आया कि कोई पदार्थ की दशा कोई दूसरा पदार्थ करे, तीन काल तीन लोक में हो सकता नहीं। समझ में आया? हमने यह बनाया, पुस्तक बनाया, जीवों की रक्षा की, उसकी मैंने मदद की, हमारा उस पर प्रभाव पड़ा, उसका हम पर प्रभाव पड़ा, वह सब व्यवहारनय निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध में एकदूसरे का कारण-कार्य को आरोप करके कथन करती है, ऐसा मान ले कि उसका प्रभाव उसमें और उसका प्रभाव उसमें, मिथ्या पापदृष्टि है, असत्यदृष्टि है, झूठदृष्टि है, अधर्मदृष्टि है, भविष्य में क़साईखाना चलायेगा ऐसी दृष्टि है। कठिन बात, भाई! जगत को यह बात...

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- अनर्थ। जो त्रिकाल द्रव्य वस्तु स्वभाव सर्वज्ञ ने जानी, वस्तु ऐसी है, वाणी में ऐसा आया। तीनों से विरोध मानने वाला (ऐसा मानता है कि), देखो! हम था तो ऐसा हुआ, वहाँ हम था तो ऐसी व्यवस्था परद्रव्य में हुई। व्यवहार से कहने में आता है, ऐसा होता नहीं। समझ में आया?

'**किसी को किसी में नहीं मिलाता है;...**' निश्चय तो जैसी चीज है, द्रव्य अपना अपने से है, अपनी शक्ति अपने से है, अपनी पर्याय विकारी-अविकारी अपने से है, ऐसा निश्चयनय कथन करती है। ऐसे मानना वह सम्यग्दर्शन है। कहो, बाबुभाई! यह गड़बड़। शेठी! क्या है? असर-फसर किसी की पड़ती है कि नहीं? भगवान के पास अनंत बैर गये, साक्षात् समवसरण में। क्या करे भगवान? क्या दूसरे द्रव्य का पर्याय करनेवाला भगवान है? दूसरे में जैसे ईश्वर कर्ता-हर्ता है ऐसी कोई चीज है? समझ में आया? ऐसा है नहीं। कोई कर्ता-हर्ता है नहीं। स्वयं भगवान आत्मा अपनी पर्याय करने में वर्तमान काल में जो होनेवाली है उसको करने में ताकात रखती है। किसी के कारण से हो, दूसरे के कारण से हो वह बात वस्तु में है नहीं। समझ में आया?

देखो! '**सो ऐसे ही श्रद्धान से सम्यक्त्व होता है;...**' सम्यग्दर्शन जो अनंत काल में एक सेकण्डमात्र का भान न हुआ। अनंत बार नौंवी ग्रैवेयक (गया ऐसा) दिगंबर जैन साधु हुआ, दूसरे की बात तो कहाँ कहनी? वह तो व्यवहार भी सच्चा नहीं है। परन्तु जिसको दिगंबर साधु (कहें), अट्ठाईस मूलगुण पाले, हज़ारों रानियों का

त्याग और वैराग्य इतना कि दूसरे को ऐसा लगे कि मानो तृण की तूँबडी हो। तूँबडी समझते हो? तुँबी होती है न तुँबी? वह तैरती है और मानों दूसरे को तारेगी ऐसा लगे। अरे.. भगवान! तुझे वस्तु की स्थिति की खबर नहीं। दिगंबर साधु ऐसा नग्न मुनि जंगल में रहनेवाला, परन्तु ऊँडे-ऊँडे उसको देह की क्रिया मेरे से होती है और मैं पर का कुछ करनेवाला हूँ, कोई अपेक्षा से, व्यवहारनय से तो हूँ न, और अपने में दया, दान, व्रत का भाव आता है वह मेरा धर्म है और उससे मुझे धर्म होगा, ऐसी मान्यता रखी तो एक भव कम हुआ नहीं और मिथ्यादृष्टि रहा। समझ में आया? लोगों को अंतर मिथ्यात्व क्या है और सम्यक्त्व क्या है, क़िमत ही नहीं। अनंत-अनंत काल हुआ, 'अनंत काळथी आथड्यो विना भान भगवान,' वह आता है, किस में? मालूम नहीं? आत्मसिद्धि। श्रीमद् ने २९ वें वर्ष में गाया न?

अनंत काळ से आथड्यो विना भान भगवान,
सेव्या नहीं गुरु संत ने मूक्युं नहीं अभिमान।

जैनधर्म की कला अनंत काल में एक सेकण्ड भी प्रगट हुई नहीं और वह कला कैसे प्रगटे उसकी रीत और पंथ की भी खबर रही नहीं। अपनी कल्पना से और प्ररूपक जैसा मिला ऐसी मान्यता से अनादि से चला है। समझ में आया? जेठीमलजी!

निश्चय, ओहो..! अपने धर्म की निर्दोष पर्याय अपने से होती है। विकार दया, दान अपने से होती है। पर का कार्य पर से होता है, मेरे से नहीं। जैसा निश्चय का स्वरूप जैसा यथार्थ है ऐसा निश्चय(नय) कहती है। ऐसा श्रद्धान करने से अनंत काल में नहीं हुआ ऐसा सम्यग्दर्शन प्रगट होता है। सम्यग्दर्शन के बाद व्रत, तप और चारित्र होता है। सम्यग्दर्शन नहीं वहाँ बिना अंक का शून्य है। कोरे कागज़ पर एक क्रोड़ शून्य। पहला एक अंक न मिले। पहले को क्या कहते हैं? पहले कहते हैं न? शुरू में, शुरू में एक नहीं, बिंदू का पार नहीं। क्रोड़ो शून्य में कोई एक एक अंक आता नहीं। बराबर है? और एक अंक आया, सम्यग्दर्शन वस्तुस्थिति, देव-गुरु-शास्त्र क्या और मेरी चीज क्या, ऐसा अंतर में पीछान हुई (तो) एक का अंक लग गया। बाद में स्वरूप की स्थिरता का एक शून्य लग जाये, एक में शून्य लगा तो दस हो गया। एक हो तो शून्य दस हो जाये, नव (बढ़) गया। और एक के बिना क्रोड़ शून्य हो, नरभेरामभाई! कुछ नहीं?

मुमुक्षु :-- बिना एक के कुछ काम का नहीं।

उत्तर :-- बिना एक के व्यर्थ ही है। ऐसे सम्यग्दर्शन, सत्यदर्शन सर्वज्ञ त्रिलोकनाथ परमात्मा कहते हैं वह क्या चीज है, वह समझे और प्रतीत, अनुभव बिना सब थोथेथाथा है। उसका त्याग और उसके व्रत और उसका नियम और उसके उपवास अरण्य रूदन,

रण में रूदन करने जैसा है, उसका रूदन कोई सुने नहीं और उसका रूदन मिटे नहीं। समझ में आया?

कहते हैं कि निश्चयनय... '**ऐसे ही श्रद्धान से सम्यक्त्व होता है, इसलिये उसका श्रद्धान करना।**'

'**यहाँ प्रश्न है कि यदि ऐसा है तो जिनमार्ग में दोनों नयों का ग्रहण करना कहा है,...**' भाई! शास्त्र में तो दोनों नयों का ग्रहण कहा है। आप, एक नय के कथन को सम्यग्दर्शन और दूसरे नय के कथन को माने तो मिथ्यादर्शन (कहते हो)। शिष्य ने प्रश्न किया। बड़ी मार्मिक बात है। टोडरमलजी ने गृहस्थाश्रम में रहकर हज़ारों शास्त्रों का निचोड़ निकालकर आचार्यों और सर्वज्ञ का पेट (--रहस्य) क्या था वह खुल्ला कर दिया है। कहते हैं कि जिनमार्ग में निश्चय और व्यवहार (दोनों कहे हैं)। भाई! निश्चय और व्यवहार दोनों सुनते हैं, हम दोनों सुनते हैं कि निश्चय और व्यवहार दो होते हैं। दो नय का कथन तो है, है नहीं ऐसा नहीं।

'**जिनमार्ग में दोनों नयों का ग्रहण...**' यहाँ ग्रहण पर वज़न है। शास्त्र में तो दोनों नयों को आदरणीय कहा, ग्रहण कहा। ग्रहण करो, ग्रहण करो, ग्रहण करो। निश्चय को भी ग्रहण करो और व्यवहार को भी ग्रहण करो, ऐसा शास्त्र में आता है और तुम कहते हो कि निश्चय को ग्रहण करो और व्यवहार को छोड़ दो। ऐसा क्यों कहा? सुन तो सही। '**सो कैसे?**'

'**समाधान :-- जिनमार्ग में कहीं तो निश्चयनय की मुख्यता लिये व्याख्यान है,...**' सर्वज्ञ भगवान के मुख से निकला, संतों आचार्यों जंगल में बसनेवाले धर्मात्मा उन्होंने जो कोई.... '**निश्चयनय की मुख्यता लिये व्याख्यान है, उसे तो 'सत्यार्थ ऐसे ही है'...**' स्वद्रव्य आश्रय, स्वगुण आश्रय, स्वपर्याय आश्रय, स्वविकार आश्रय जो कथन 'उसका यह है' ऐसा कहा वह सत्यार्थ है। समझ में आया? '**मुख्यता लिये व्याख्यान है, उसे तो 'सत्यार्थ ऐसे ही है'...**' सत्य ऐसा ही है। लेकिन अभी निश्चयनय क्या, व्यवहारनय क्या खबर भी नहीं है। तुंबडी में कंकर। तुंबडी होती है कि नहीं? वह सूखी हो तो अन्दर का बीज होता है न बीज? आवाज़ बहुत करती है, मानों अन्दर पैसा होगा। तुंबडीमें से अलग हो जाये न? बीज बड़े-बड़े होते हैं, इतने। लौकी इतनी (बड़ी)। अलग हो जाये, और वह पोला पतला हो, (ऐसा लगे) इसमें रूपया होगा? रूपया समझे? उसमें रूपया पड़ा होगा। छिद्र तो है नहीं, पूरी तुंबडी है, छिद्र है नहीं। आवाज़ बहुत आती है, भैया! तुंबडी में कँकर, वह तो बीज है। रूपया-बुपया कहाँ-से आया? आवाज़ ऐसी लगे, रूपया जैसी आवाज़, नीचे पटकते हैं न रूपया? क्या कहते हैं? छीपड़ी पर पहले करते थे न? अब तो

कहाँ आप का रूपया रहा, अब तो (नोट हो गयी)। पाँच-पाँच हज़ार, दस हज़ार, बीस हज़ार रोकड़े कहाँ गिनने बैठे? नोट, पाँच लाख की, दस लाचख की। पहले तो छीपड़ी पर खटखटाते थे, छीपड़ी समझते हो? काले पत्थर की एक रखते थे, काला पत्थर का एक टूकड़ा बरामदा में रखते थे, बाकी सब गारा। यह तो पहले की बात है सब। समझ में आया?

वैसे यहाँ तुंबड़ी में बीज है या कँकर है या पैसा--रूपया है, खबर भी नहीं। ऐसे निश्चय क्या है? व्यवहार क्या है? कहाँ निश्चय का कथन शास्त्र में चला? और कहाँ व्यवहार का किस अपेक्षा से चला? खबर नहीं, बस! पढ़ते रहो, कहते रहो और गप्प मारते रहो। समझ में आया?

कहते हैं, वीतरागमार्ग त्रिलोकनाथ सर्वज्ञ परमात्मा सीमंधर प्रभु महाविदेह क्षेत्र में विराजते हैं। समझ में आया? यहाँ से कुन्दकुन्दाचार्य वहाँ गये और आठ दिन रहे थे। आठ दिन वहाँ भगवान के पास रहे थे और साक्षात् दो हज़ार वर्ष पहले कुन्दकुन्दाचार्य आये, सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र था, लेकिन आचार्य भरतक्षेत्र में थे, बहुत निर्मलता भगवाके पास से लाये, यहाँ आकर शास्त्र बनाये। सर्वज्ञ त्रिलोकनाथ परमात्मा ऐसा फरमाते हैं, समझ में आया? कहा था कि नहीं वह? पोन्नुर हील, मद्रास से अस्सी माईल पोन्नुर हिल छोटी पहाड़ी है। गये थे तुम? आये थे? हैं? गये थे, धीरे-धीरे बोलते है। पंद्रह मिनिट का रास्ता है ऐसा, उसमें गुफा है। वहाँ पंडित लोगों ने भाषण किया था कि कुन्दकुन्दाचार्य यहाँ ध्यान में विराजते थे। उसमें विकल्प आया और भगवान के पास वहाँ से गया, साक्षात् त्रिलोकनाथ के पास। वहाँ से आठ दिन रहकर यहाँ आये और यहाँ समयसार शास्त्र आदि पोन्नुर हिल में बनाये हैं। लक्ष्मीचंदजी! खबर भी नहीं होगी आप को तो वह। शेठी!

मुमुक्षु :-- पुजारी ने कहा था।

उत्तर :-- पुजारी कहता था न? वह आदमी कहता था, पंडित लोगों ने भाषण किया था।

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- इतिहास नहीं, वहाँ अन्यमति का एक साधु है, उसमें से वह निकला। यहाँ एक महान पुरुष संत रहते थे और बड़ी लब्धि थी, बड़ी ताकात थी, ध्यान करते थे। अन्यमति में भी निकला। ये तो अपना जैन का पंडित है न मद्रासवाला, वह कहते थे। यहाँ ऐसा चलता है, ऐसी बात चलती है, बहुत प्रभावना वहाँ है। भगवान कुन्दुकुन्दाचार्य का चरण है, नया बनाया है, पुराना तो कहाँ है। और ऊपर वहाँ चंपा का वृक्ष है। चंपा के पाँच वृक्ष के फूल... पवन हो तो उसके ऊपर पड़े

न, लेकिन लोगों को ऐसी महिमा है कि कुदरती चंपा के पाँच वृक्ष के फूल चरण पर गिरते हैं। समझ में आया? लो, यह बहुत होता है, रविवार-रविवार को अमुक लोग आते हैं, बारह महिने में एक दिन है कोई, मुझे मालूम नहीं है। बहुत लोग आते हैं। हम तो पहली बार गये थे, ऐसा लगा कि बात तो सच्ची लगती है यहाँ। समझे? भगवान के पास गये थे यह बात तो सच्ची है, यह लोग, यहाँ से गये हैं, ऐसा कहा, तो कहीं-से तो गये थे के नहीं? साक्षात् भगवान के पास जाकर, मुनि भावलिंगी दिगंबर संत थे, दो हजार वर्ष पहले संवत ४९ में। वहाँ जाकर आठ दिन बहुत सुना।

वहाँ के चक्रवर्ती थे, उसने पूछा, प्रभु! यह कौन (है)? क्योंकि वहाँ तो पाँचसौ धनुष का देह, दो हजार हाथ, ये चार हाथ के, तीड़ जैसा लगे, तीड़। तीड़ तीड़ समझे? पतंगा, पतंगा। नरभेरामभाई! दो हजार हाथ और ये चार हाथ। कितने भाग हुए? पाँचसौ गुना, भगवान की सभा। अभी परमात्मा विराजते हैं, चक्रवर्ती भी वहाँ है। यह दो हज़ार वर्ष पहले की बात है। वहाँ तो आयुष्य क्रोड़ पूर्व का है। भगवान तीर्थंकरदेव का क्रोड़ पूर्व का आयुष्य है। एक पूर्व में सीत्तेर लाख क्रोड़ छप्पन हज़ार वर्ष चला जाता है। एक पूर्व में सीत्तेर लाख क्या है? बड़ी चीज नहीं है। यहाँ तो आहाहा.. बड़ी लगती है। अनादि से चला है इसमें इतना...

एक पूर्व में सत्तर लाख क्रोड़ वर्ष और छप्पन हज़ार क्रोड़ वर्ष एक पूर्व में जाते हैं, ऐसा क्रोड़ पूर्व का भगवान का आयुष्य वर्तमान में विराजते हैं उनका है। भगवान की वाणी निकलती है समवसरण में अभी। इन्द्र जाते हैं, समवसरण में दिव्यध्वनि होती है। वहाँ भगवान के पास कुन्दकुन्दाचार्य गये थे। आठ दिन वहाँ रहे और फिर यहाँ आकर समयसार, प्रवचनसार (की रचना की)। ओहो..! सर्वज्ञ का पंथ तो यह है, मार्ग वीतराग का यह है, ऐसा समझे बिना अनंत काल से अपनी कल्पना से मान रखा है, मिथ्यादृष्टि (है)। समयसार, प्रवचनसार आदि में बहुत-बहुत लेख लिखे।

मिथ्यादृष्टि की क्या क़िमत है, खबर नहीं। मिथ्यादृष्टि है, भले मिथ्या है जाओ। अरे..! मिथ्यादृष्टि का पाप निगोद में ले जायेगा। समझ में आया? निगोद--एक बटाटा, शक्करकंद (में) एक शरीर में अनंत जीव, उसमें चला जायेगा परंपरा करके। आत्मा क्या चीज है? निर्मल सम्यग्दर्शन क्या है? मिथ्यात्व क्या है उसका विवेक नहीं, उसका परिणाम तो आचार्य महाराज निगोद कहते हैं। क्या करे? उसकी क़िमत नहीं। मिथ्यात्व में कितना पाप है और सम्यग्दर्शन में कितना धर्म है।

कहते हैं कि निश्चय का कथन यथार्थ है। देखो! **'ऐसा जानना। तथा कहीं व्यवहारनय की मुख्यता लिये व्याख्यान है, उसे 'ऐसे है नहीं,..'** गोम्मटसार

में आया, ज्ञानावरणीय से ज्ञान रुका, दर्शनावरणीय से दर्शन रुका ऐसा कथन आया। तो व्यवहारनय की मुख्यता से कथन है। समझ में आया? तो कैसे मानना? ओहोहो..! देखो! घातिकर्म से ज्ञान, दर्शन, आनंद का घात हुआ। व्यवहार की मुख्यता से कथन है, वस्तु ऐसी है नहीं। कथन की खबर नहीं, किस नय का कथन है। यह लिखा है, ये लिखा है, सब तकरार करते हैं। लिखा है सब, सुन तो सही। किस नय के आश्रय से कथन चलता है, उसका तुझे भान नहीं और मान ले कि वह भी सच्चा और वह भी सच्चा। व्यवहारनय का कथन भी सच्चा और निश्चय का कथन भी सच्चा। दोनों सच्चा हो सकता नहीं।

कहते हैं, '**ऐसे है नहीं,...**' आहाहा..! यह बात। व्यवहारनय का कथन परद्रव्य के आश्रय से पर में कुछ होता है, ऐसा जहाँ-जहाँ कथन--उपदेश चले उसका ऐसा अर्थ करना। वह व्यवहारनय कहती है ऐसा है नहीं। शास्त्र में लिखा है व्यवहारनय से तो ऐसा भी है नहीं। ओहोहो..! वह कहाँ निठल्ला है। शेठी! निवृत्त है? अभी तक निवृत्त हुआ नहीं। समझने की चीज है। महेन्द्रभाई निवृत्त हुए, नहीं तो कहाँ निवृत्त है। जौहरी, लेना और देना, आना, जाना...।

मुमुक्षु :-- जिंदगीभर तो...

उत्तर :-- ऐसा कहते हैं, जिंदगीभर तो कुछ करना नहीं है। नवराश नहीं समझते? फूरसत लेना, आप की भाषा में। आप की सब भाषा तो आती नहीं, ये तो आप बहुत हिन्दुस्तानी है तो थोड़ी-थोड़ी हिन्दी होती है, सब नहीं आती है हम को। समझ में आया? काम चले साधारणजन को, ऐसी हिन्दी है। क्या कहते हैं?

ओहो..! '**ऐसे है नहीं,...**' वैद्यराज! क्या कहा? ऐसा है नहीं। रुचता है उनको। समझ में आया? जहाँ-जहाँ व्यवहारनय से कथन चला हो, उसके कारण उसमें प्रभाव पड़ा, उसके कारण से असर आया, कर्म का अनुभाग का प्रभाव जीव में आया, कर्म का अनुभाग तीव्र था तो आत्मा में तीव्र परिणाम विकार का करना पड़ा या हुआ। ऐसा है नहीं, ऐसा है नहीं। है क्या? '**निमित्तादिकी अपेक्षा...**' निमित्तादि अथवा... समझे? व्यवहार, संयोग। निमित्तादि यानी निमित्त और संयोग की अपेक्षा उपचार किया है ऐसा जानना। वह तो उपचार कथन है। कथनी में वर्तमान में बड़ा विरोध। पंडित लोग और कुछ त्यागी लोगों के साथ में यह विरोध है। समझ में आया? क्यों पंडितजी?

मुमुक्षु :-- ..

उत्तर :-- यह बात अनंत काल से सुनी नहीं। अनंत काल। त्यागी अनंत बार हुआ, मर गया संथारा करके। दो-दो महिने का संथारा। संथारा समझते हो? दो मास,

साठ दिन। साठ दिन कैसा? जैसे वृक्ष की डाल पड़े। अंतर तत्त्व की क्या चीज है उसका भान नहीं, पता नहीं।

ज्ञानमूर्ति प्रभु, राग से निराला और राग होता है दया, दान का वह भी पुण्यबन्ध का कारण, मेरी पर्याय में मेरे कारण से होता है, पर के कारण से नहीं। समझ में भेदज्ञान कभी एक समय में भेद किया नहीं और भेदज्ञान बिना कभी आत्मा का कल्याण होता नहीं। देखो! व्यवहारनय भेद नहीं कराती है ऐसा कहते हैं। व्यवहारनय तो दोनों को अभेद कथन करती है। ऐसा नहीं है ऐसा जानना। आहाहा..! '**ऐसे है नहीं, निमित्तादि की अपेक्षा उपचार किया है**'। उपचार--आरोप किया है। चावल कहा था न? बोरी होती है न? चावल की बोरी। कहाँ गये हमारे कुंवरजीभाई? ये चावल की बोरी, चार मण और अढाई शेर। एक बार कहा था न? तोलते हैं, तोलते हैं। चार मण और अढ़ाई शेर। हमारी दुकान के पास दुकान थी, लोटिया बोहरा की। तो वह बोले, कोळी तौलता था, एक कोळी था। बड़ा था उस दिन, दारू बहुत पीता था। चार मण और अढ़ाई शेर। चार मण चावल और अढाई शेर तो बारदान है। चावल के साथ बारदान तौलने में आया। उसे निकाल देना चाहिये। वहाँ (चावल) खत्म हो जाये तो कहीं बारदान की रसोई नहीं होती। चार मण चावल (खत्म हो गये)। अढ़ाई शेर कम हुए, चावल तो चार मण अढ़ाई शेर था।

मुमुक्षु :-- उसके पैसे तो...

उत्तर :-- वह तो उस वक्त ऐसा होता था, पैसा चावल का देना पड़ता है। क्या कहते हैं? सिंगापुर के चावल आते थे न, इतने लंबे? हरा पट्टा नहीं? पाँच-पाँच मण की बोरी। वह बोरी चावल के साथ तौली जाती है। पैसा देना पड़े, लेकिन उसे खाया नहीं जाता। देवीदासजी! आता है वह, वह चावल आता था, सिंगापुर के। बड़ी पाँच मण की बोरी, बीच में हरा पट्टा, हरा पट्टा। सिंगापुर से चावल (आते थे)। हमने तो सब देखा है न। हम तो कुल्फा देखा है, हमारे घर पर कुल्फा के चावल खाते थे। कुल्फा, कुल्फा। अब कुल्फा-बुल्फा भूल गये, कुंवरजीभाई भूल गये होंगे। कुल्फा के पतले चावल होते थे, ये बांसावड़ अब होते हैं। समझ में आता है? उस वक्त पतले कुल्फा होते थे, उसकी बड़ी बोरी आती थी। वह सब तो (लोभी) थे न, उस ही में बहुत घुस जाये, इसलिये कुछ मालूम नहीं होता। समझ में आया? क्या कहते हैं?

व्यवहारनय से कथन किया हो, मुख्यता से हाँ! व्यवहार की मुख्यता से। देखो भैया! भगवान का दर्शन हुआ (तो) श्रेणिक राजा ने नर्क का आयुष्य तोड़ दिया, सम्यग्दर्शन पा लिया, भगवान के समीप में पाया, भगवान न होतो पाते नहीं। ऐसी

कथनी व्यवहार से मुख्यता से कहने में आयी है। वह तो अपने पुरुषार्थ की क्रिया से क्षायिक सम्यग्दर्शन पाया है। समझ में आया? इसप्रकार जहाँ-जहाँ...

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- क्या? लेकिन क्या? करनेवाला कौन? हो चुका। अपनी पर्याय का कर्ता, अपनी पर्याय का काम आत्मा का है, नहीं कि भगवान से हुआ है। भगवान के समवसरण में तो बहुत सिंह, बाघ, क्रोड़ो इन्द्र आते हैं, क्या सब समझते हैं? यूँ ही समझे बिना चले जाते हैं। अनंत काल ऐसा हुआ। क्या कहने में आता है? क्या मर्म आया है? वह बात पकड़ में न आवे तो मिथ्यादृष्टि लेकर चला जाये। क्या करे कोई? समझ में आया?

कहते हैं कि, जहाँ-जहाँ व्यवहार का कथन चला हो, वहाँ वह निमित्तादि की अपेक्षा उपचार किया है ऐसा जानना। '**इसप्रकार जानने का नाम ही दोनों नयों का ग्रहण है।**' देखो! प्रश्न किया था न उसने? कि शास्त्र में दो नयों का ग्रहण करने का कहा है, ग्रहण करने को कहा है, ग्रहण करने को कहा है। तो तुम कहते हो कि निश्चय को ग्रहण करो और व्यवहार की श्रद्धा करके छोड़ दो। निश्चय एक उपादेय, व्यवहार की श्रद्धा इतना मानो, छोड़ दो, श्रद्धा छोड़ दो कि ऐसी बात है। हमने तो इतना सुना है कि दो नय का ग्रहण है। धन्नालालजी! ग्रहण का अर्थ दोनों को अंगीकार करना? नहीं, नहीं। ग्रहण का ऐसा अर्थ हुआ, निश्चय से कहा हो ऐसा सत्यार्थ मानकर मानना सच्चा। व्यवहार का कथन मुख्यता से कहा, उपचार से कहा ऐसा जानना। उसको जानने का नाम ग्रहण किया है। आदरना है ऐसा कहने में आया नहीं। ये जानना और आदरना, यह सब क्या होगा? समझ में आया?

अनंत काल में कभी सुना नहीं। ओहो..! अपूर्व धर्म एक सेकण्ड, एक सेकण्ड (का) सम्यग्दर्शन जन्म-मरण का अंत (कर दे)। ऐसी बात कभी सुनी नहीं, रुचि नहीं, अन्दर में परिणमी नहीं।

मुमुक्षु :-- नय निश्चय एकांत नहीं, बन्ने साथ रहेल।

उत्तर :-- बन्ने साथ रहेला, दूसरी है। वह तो कहा नहीं? दूसरा है, जानना कि दूसरा है। आदरने को कहाँ कहा है? उसमें तो सिद्धांत यह निकला कि पहले व्यवहार बाद में निश्चय ऐसा तो है नहीं। ऐसा आत्मसिद्धि में निकला। वह तो वहाँ अगास में कहा था, देखो! क्या कहते हैं श्रीमद्?

नय निश्चय एकांतथी एमां नहीं कहेल,
एकांते व्यवहार नहीं बन्ने साथ रहेला।

मुमुक्षु :-- दोनों साथ-साथ?

उत्तर :-- हाँ, दोनों साथ। अपने आया न? द्रव्यसंग्रह में ४७वीं गाथा। '**दुविहं पि मोक्खहेउं झाणे पाउणदि जं मुणी णियमा।**' द्रव्यसंग्रह की ४७वीं गाथा है। एकसाथ निश्चय-व्यवहार ध्यान में आता है। समझ में आया? यहाँ भी कहा, एकसाथ दो है। पहले व्यवहार करो फिर निश्चय होता है (ऐसा) वस्तु में है नहीं। श्रीमद् स्वयं कहे, उसका अर्थ करनेवाले को समझ में आये नहीं। समझ में आया? वह थोड़ा बोल गये था, हाँ! एक जन बोला था वहाँ, बात तो बड़ी सूक्ष्म है, यहाँ तो स्थूल चलती है। भाई! श्रीमद् कहते हैं यह भी तुम को मालूम नहीं।

निश्चय यानी आत्मा का स्वभाव का भान। शुद्ध चैतन्यमूर्ति ज्ञाता और उसमें रह न सके इसलिये दया, दान, व्रत, भक्ति, तप, जप, पूजा, यात्रा का भाव आता है उसको जानना उसका नाम व्यवहार, है उसका नाम व्यवहार। आदरणीय उसका नाम व्यवहार ऐसा कहने में आया नहीं। एकसाथ दोनों रहते हैं। निश्चय बिना व्यवहार कैसा? और व्यवहार बिना निश्चय कैसा? समझ में आया? दो नय का साथ में ज्ञान करना है न। व्यवहार बिना निश्चय कैसा का अर्थ कहीं व्यवहार से निश्चय है ऐसा नहीं और निश्चय से व्यवहार है ऐसा भी नहीं। साथ में दोनों है। स्वरूप का भान भी है और अन्दर दया आदि, भक्ति, पूजा का भाव भी है, दो नय साथ में रहती है। क्यों माणिकलालजी! समझ में आया?

'**इसप्रकार जानने का नाम ही...**' देखो! वज़न दिया। '**जानने का नाम ही दोनों नयों का ग्रहण है।**' हाँ! जानना, दो नय जानना। आदरना एक और जानना दोनों। आदरना एक निश्चय और जानना दोनों। एक नय जाने नहीं तो... वह तो पहले आ गया, व्यवहार को न माने तो एकांत मिथ्यादृष्टि है। व्यवहार को आदरणीय माने तो मिथ्यादृष्टि है। धर्म का मूल की उसको खबर नहीं। समझ में आया? '**तथा दोनों नयों के व्याख्यान को समान सत्यार्थ जानकर 'ऐसे भी है, ऐसे भी है' - इसप्रकार भ्रमरूप प्रवर्तन से तो दोनों नयों का ग्रहण करना नहीं कहा है।**' भगवान संतों ने और भगवानों ने, तीर्थंकरों ने दोनों नय का कथन समान, निश्चय भी समान, व्यवहार भी समान, दो कक्ष... क्या कहते हैं? समानकक्षी, दोनों समकक्षी। निश्चय भी नय है और व्यवहार भी नय है। दोनों समकक्षी है। दोनों का पलड़ा समान है। समझ में आया? नहीं, ऐसा है नहीं। वह कहते हैं कि दोनों पलडु है, एक में भले माल हो, एक में तोल हो। ऐसा यहाँ दृष्टान्त लागू पड़ता नहीं। समझ में आया?

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- हाँ, ऐसा हो गया। ऐसा है नहीं।

अंतर भगवान आत्मा, जिसको शास्त्र में निश्चय सत्य स्वरूप, स्वतंत्र स्वरूप से कथन कहा हो वही सत्यार्थ है। और जहाँ निमित्तादि पराधीन व्यवहारादि से उपचार किया हो वह सत्यार्थ नहीं, सच्चा नहीं। दोनों को सच्चा मानना भ्रम है, तेरी मिथ्यादृष्टि है। ओहोहो..! समझ में आया? हाँ कही थी कि नहीं तुमने? डालचंदजी! तुम्हारे पास पत्ता आया था न। भोपाल से आया था। यहाँ भी आप के नाम से विशेष छपा था। भावनगर में विशेष छपा था। देखो, यहाँ भोपाल से आया है और है तो टोडरमलजी का, किसी का है नहीं। आहाहा..!

तो कहते हैं, निश्चय का कथन चला हो उसकी खबर न हो, वह भी सच्चा। व्यवहार से कथन किया हो वह भी सच्चा। '**दोनों नयों के व्याख्यान को समान सत्यार्थ...**' समान यानी सरीखा और '**सत्यार्थ जानकर 'ऐसे भी है, ऐसे भी है'--इसप्रकार भ्रमरूप प्रवर्तन से...**' यह तो तेरी भ्रमणा है। व्यवहार तो एक निमित्त का ज्ञान कराने को कहा था, उसमें घुस गया तुम, उससे होता है और उससे होता है। पालो, संयम, व्रत पालो उससे कभी कल्याण होगा। मर जायेगा तो भी कल्याण नहीं होगा, सुन न। मर जाते हैं, निगोद में जाते हैं क्रम-क्रम से। समझ में आया? दृष्टि की खबर नहीं, सम्यग्दर्शन की क्या चीज है? निश्चय की चीज क्या है उसकी प्रतीति, पहिचान, भान नहीं, कहाँ-से आया? भवभ्रमण में, चौरासी के पंथ में चला जायेगा। एक भव भी घटेगा नहीं। समझ में आया? धरमचंदजी! '**दोनों नयों को ग्रहण करना नहीं कहा है।**' '**इसप्रकार भ्रमरूप प्रवर्तन से तो दोनों नयों का ग्रहण करना नहीं कहा है।**'

'**फिर प्रश्न है...**' दोनों नयों को ग्रहण करने का अर्थ है कि व्यवहार है ऐसा जानना। निमित्त की अपेक्षा कथन किया है ऐसा जानना। निश्चय की यथार्थ वस्तु है उसको जानकर आदरना। समझ में आया? आदरना तो आत्मा की बात है। पर में है निश्चय का कथन तो यथार्थ है और व्यवहार का कथन पर में हो वह उपचार से है, ऐसा पर को भी जानना। समझ में आया? ... सामनेवाले का निश्चय है वह तो अपने को आदरना है नहीं। ज्ञेय की यथार्थ स्वतंत्र बात कही हो उसकी पर्याय, उसका द्रव्य-गुण से हुआ, वह सत्यार्थ उसका है ऐसा तुझे जानना। और व्यवहार से कथन किया हो उसको उपचार है, निमित्त की अपेक्षा कथन किया ऐसा तुझे जानना। समझ में आया? दोनों नयों को समान और सत्यार्थ (नहीं मानना)। व्यवहार भी सच्चा है कि नहीं? नहीं, व्यवहार तो निमित्त की अपेक्षा कथन करनेवाला है, सच्चा है नहीं।

बनारसीदास के वखत में वह चर्चा हुई थी। बनारसीदास ने निकाला कि व्यवहार

की रुचि करनेवाला मिथ्यादृष्टि है। इतना .. हुआ सामने दूसरे संप्रदाय में, कोई एक नाम था, नाम की खबर है हमको, उसने फिर एक बनाया कि नहीं, बनारसीदास कहते हैं कि निश्चय एक आदरणीय है और व्यवहार आदरणीय नहीं है। दोनों नय समकक्षी है। फिर पुस्तक बनाया युक्ति से। समझ में आया? ऐसा है नहीं। अभी भी ऐसा निकाला था थोड़े वर्ष पहले, (संवत) १९९९ की साल में। निश्चय, निश्चय सत्यार्थ है और व्यवहार सत्यार्थ नहीं (ऐसा नहीं), दोनों नय समकक्षी है। दोनों पलड़े को समान मानना।

मुमुक्षु :-- व्यवहार व्यवहार की जगह सच्चा है न?

उत्तर :-- व्यवहार सच्चा है इतना, आदरणीय है वह किसने कहा? है इसको जानना वह सच्चा। यहाँ आदरणीय की बात है। सच्चा नहीं है?

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- अरे..! उसके पास अपने से हुआ।

मुमुक्षु :-- क्षायिक सम्यक्त्व केवली के ...

उत्तर :-- लेकिन वह अपनी पर्याय से हुआ कि पर से हुआ? भगवान के पास तो बहुत लोग विराजते हैं समवसरण में। भगवान के पास समवसरण में तो तिर्यंच, पशु, देव, क्रोड़ो लोग हैं, सब को क्यों धर्म नहीं होता? भगवान से होता हो तो। अपनी पर्याय से हुआ अपने कारण से पुरुषार्थ से, तब उसको निमित्त कहने में आया। क्या करे? सुना नहीं। एक मश्करी.. मश्करी न? एक साधु हुआ था, मश्करी साधु, पार्श्वनाथ का साधु था। भगवान के समवसरण में गया, गया तो उसे ऐसा था कि मुझे गणधरपद मिलेगा। मैं पुराना साधु हूँ, पुराना साधु हूँ तो मुझे गणधरपद मिला नहीं। गौतम ब्राह्मण था। वेद में बड़ा प्रवीण। सारये, वारये, धारये, पारये। समझ में आया? वेदांत में सब धारणा में... वारे, कोई भूल करे तो वारे, नहीं ऐसा नहीं। इतनी बुद्धि, बहुत उघाड़, ... शास्त्र का। वह आया, ऐसे भगवान को देखा.. आहा..! सम्यग्दर्शन (हो गया)। बिना वाणी सुने। किसने किया? भगवान के कारण से हुआ? लेकिन आये बिना रहे कहाँ-से? वह तो प्रश्न हुआ था।

ऐसा प्रश्न है धवल में, कि गणधर तो होनेवाली योग्यता को उस काल में क्यों लाया? पहले क्यों नहीं लाया? इन्द्र पहले क्यों नहीं लाया? इन्द्र है ऊपर, शक्रेन्द्र वर्तमान। बत्तीस हजार विमान का स्वामी--नायक। एकावतारी उसकी स्त्री और स्वयं एक भव करनेवाले हैं। एक मनुष्य करके मोक्ष जानेवाले हैं दोनों। विराजते हैं, पहले स्वर्ग में। शक्रेन्द्र और शची। समझे? क्यों नहीं लाये भगवान के पास पहले? यहाँ है न, राजगृही? कौन-सा .. कहलाता है? विपुलाचल पर्वत है न? हम लोग गये

थे न यात्रा में? विपुलाचल पर्वत पर भगवान आये, ६६ दिन तक वाणी बन्द रही। दो मास और छः दिन। इन्द्र ने विचार किया कि अरे..! भगवान की वाणी क्यों नहीं निकलती है? वह तो केवली है, उसको कहा नहीं कि, महाराज! वाणी निकालो। वह तो केवली वीतराग है। एक समय में तीन काल, तीन लोक जानते हैं। क्या हुआ? भगवान को केवलज्ञान हुआ, वाणी न निकली। उपयोग रखा अवधिज्ञान का। कोई पात्र जीव नहीं दिखता है, इसलिये वाणी निकलती नहीं है। वह निमित्त से कथन है।

गणधर को ले आये, गौतम को ले आये। जहाँ आये, सम्यग्दर्शन हो गया। चार ज्ञान, चौदह पूर्व एक अंतर्मुहूर्त में रचे। बाहर निकला, वह मश्करी साधु, मैं पुराना साधु मेरे को गणधरपद नहीं दिया और उसको गणधरपद मिला, नक्की वह सर्वज्ञ नहीं है। जाओ उडाओ। क्या करे? अपनी वृत्ति को पोषण नहीं मिला, सर्वज्ञ नहीं है। हैं? वह सर्वज्ञ नहीं है। अरे.. सुन तो सही। तेरी पदवी के लायक तू हो तो गणधरपद मिले बिना रहे नहीं। उसकी पात्रता थी, भले अन्यमति था, उसकी योग्यता ऐसी थी। ऐसे जहाँ देखा.. ओहोहो..! ये! उनका बाह्य वैभव तो इन्द्र के पास नहीं, इतना तो बाह्य समवसरण का, अन्दर का वैभव देखो तो स्थिर बिंब हो गये हैं ये तो। स्थिर बिंब परमात्मा भगवान को देखा। विपुलाचल पर्वत राजगृही नगरी में इस ओर जो पहला पर्वत है वह। है न इस ओर? समझे न? हम सब ठिकाने गये हैं न, सब देखा है न। वहाँ रहे थे। समझ में आया? वाणी निकली। चौदह पूर्व और बारह अंग की रचना गौतम ने की। वह मश्करी न कर सका। मिथ्यादृष्टि बाहर आकर.... अन्दर बोल न सके। अन्दर में इतनी नरमाई होती है न, भगवान का अतिशय है, भगवान पूर्ण स्वरूप (हैं)। बाहर निकलकर कहता है, यह भगवान सर्वज्ञ नहीं लगते हैं। क्यों? तेरी वृत्ति को ठीक नहीं पड़ा इसलिये? अच्छा। शेठी! सुना है कि नहीं? वह मश्करी साधु पार्श्वनाथ का था। तेईस तीर्थंकरमें से पुराना था। वह कहे, मैं पुराना हूँ तो हम को गणधरपद मिलेगा। न मिला, गौतम को मिला। ये केवली नहीं लगते हैं। तेरे घर में तुझे रुचा नहीं, इसलिये केवली नहीं है? ऐसा अनादि काल से अज्ञानी ने अपना स्वच्छंद छोड़ा नहीं। समझ में आया?

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- देशनालब्धि पूर्व में हो गयी होगी। हुए बिना हो नहीं। गणधर होने की लायकात है न। समझ में आया?

'**दोनों नयों के व्याख्यान को समान सत्यार्थ जानकर....**' '**व्वयहारनय असत्यार्थ है...**' अब, शिष्य का प्रश्न। व्यवहारनय से कथन शास्त्र में चले, यदि वह झूठा है तो '**उसका उपदेश जिनमार्ग में किसलिये दिया?**' तो वीतराग की वाणी और

मुनियों के मुखमें से व्यवहार का उपदेश क्यों आया? तुम तो कहते हो कि व्यवहार असत्यार्थ है, तो शास्त्र के मुख में उपदेश क्यों आया, वीतराग की वाणी में? शिष्य ने प्रश्न किया है। प्रश्न बराबर है। वह तो स्वयं ने बनाया है न। '**तो उसका उपदेश जिनमार्ग में किसलिये दिया? एक निश्चयनय ही का निरूपण करना था।**' सच्ची बात, आत्मा आत्मा की पर्याय अपने से है, अपने से धर्म, अपने से अधर्म, पर का पर के कारण से ऐसा निश्चय का ही कथन करना था। व्यवहार असत्यार्थ है तो व्यवहार का कथन क्यों किया? जिनमार्ग में यह कथन किया तो हमें भ्रमणा हो गयी। समझ में आया? दो नय में भरमाया तो दो नय से भरमाया है? तेरी दृष्टि भरमाया है। दो नय से भरमाया हो तो ज्ञानी की दो नय की भ्रमणा होती नहीं। निश्चय को निश्चय जानकर आदर करते हैं, व्यवहार को व्यवहार जानकर जानते हैं, भ्रमणा होती नहीं। उसका उत्तर।

'**समाधान :-- ऐसा ही तर्क समयसार में किया है। वहाँ यह उत्तर दिया है :--**'

जह णवि सक्कमणज्जो अणज्जभासं विणा उ गाहेउं।
तह ववहारेण विणा परमत्थुवएसणमसक्कं।।८।।

समयसार की ८वीं गाथा। दृष्टान्त देकर उस बात को प्रसिद्ध करते हैं। सुन!

'**अर्थ :-- जिस प्रकार अनार्य अर्थात् म्लेच्छ को म्लेच्छभाषा बिना अर्थ ग्रहण कराने में कोई समर्थ नहीं है,...**' समझ में आया? म्लेच्छ हो उसे उसकी भाषा में समझाना पड़े न। एक गोरा आया गोरा। दृष्टान्त। उसे कपड़ा चाहिये था। वहाँ बैठा हो और सामने मोहत्तु पड़ा हो, मोहत्तु। ऐसा बोला मोहत्ता लाना। मोहत्त क्या कहता है? मोहत्ता समझते हो? रसोई करते समय हाथ बिगड़ते हैं, कपड़ा मैला होता है उसको मोहत्तु कहते हैं। हाथ मैला हो, तावड़ी का काला हो, ऐसा होता है न? काला कपड़ा। मोहत्तु कहे तो वह क्या समझे? मोहत्तु यह क्या कहता है? उसे मोहत्तु का अर्थ करना पड़े। साहब! रसोईघर में हाथ बिगड़ते हैं तो एक कपड़ा साफ करने को रखते हैं उसको मोहत्तु कहते हैं। लंबी-लंबी बात कहो तब समझ में आये। और अपना आठ वर्ष का बालक हो तो समझे, मोहत्तु लाना। समझ में आया?

इसप्रकार म्लेच्छ मनुष्य को इस भाषा से (समझ में न आये) तो उसकी भाषा में समझाते हैं। '**म्लेच्छभाषा बिना अर्थ ग्रहण कराने में कोई समर्थ नहीं है,...**' एक बार कहा था न? यहाँ एक गोरा था। पालीताणा में दरबार चल बसे तब था न? मानसिंहजी। फिर बहादुरसिंहजी अभी छोटे थे। एक गोरा था, उसके ऊपर मेनेजर

था। वह बराबर गारियाधार आया था। गारियाधार बड़ा है न? ये सब बोले न, बाजरा, बाजरा, बाजरा। तो वह भी बोलने लगा, भाषा नहीं आती थी। बा..ज..रो.. कितना? बा..ज..रा.. तीन अक्षर तोड़ दिये। अपने यहाँ लड़का बोले, बाजरा। यह बाजरा होता है कि नहीं? वह कहे, बा..ज..रो कितना पका है? कोई हिन्दी होगा। उसकी भाषा नहीं, उसकी अंग्रेजी (भाषा है)।

इसप्रकार यहाँ कहते हैं, व्यवहार से समझाने में आता है। व्यवहार बिना समझाया नहीं जाता। '**व्यवहार बिना परमार्थ का उपदेश अशक्य है; इसलिये व्यवहार का उपदेश है।**' लो, उपदेश में करना क्या? उसको समझाना हो तो क्या समझाये? आत्मा ज्ञान है, दर्शन है, आनंद है। तो क्या आत्मा में भेद है? आत्मा तो अखंड वस्तु है। उसमें से एक गुण जुदा करके बताना कि देखो भैया! जानता है सो आत्मा, श्रद्धा करता है वह आत्मा, स्थिर रहता है वह आत्मा। ... वह आत्मा है। दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त हो वह आत्मा। वह तो भेद होकर बताया। आत्मा तीनरूप नहीं है। आत्मा तो दर्शन, ज्ञान, चारित्र का एकरूप है। लेकिन तीन का भेद किये बिना निश्चय समझाने में आता नहीं। आहाहा...! समझ में आया? '**इसलिये व्यवहार का उपदेश है।**'

'**तथा इसी सूत्र की व्याख्या में ऐसा कहा है...**' देखो! वह ८वीं गाथा में कहा, भगवान कुन्दकुन्दाचार्य ने। '**व्यवहारनयो नानुसत्तव्य**'। व्यवहार से कथन कहने में आता है कि आत्मा शरीरवाला है, आत्मा वाणीवाला है, आत्मा भेदवाला है, ऐसा कथन करने में आता है, उसको समझाने को। परन्तु व्यवहारनय अंगीकार करना नहीं। कहाँ गये देवीलालजी? सुननेवाले को भी व्यवहारनय अंगीकार नहीं करना ऐसा कहते हैं। समझाने में आये। रात्रि में प्रश्न था न तुम्हारा कि ऐसा.. ऐसा। लेकिन समझाये व्यवहार से, लेकिन समझानेवाले को व्यवहार का अनुसरण नहीं करना, समझनेवाले को भी व्यवहार का अनुसरण नहीं करना। आहाहा..!

मुमुक्षु :-- परमार्थ पकड़ने को...

उत्तर :-- परमार्थ पकड़ने को व्यवहार से कथन है। व्यवहार से व्यवहार में भटक जाने को व्यवहार का कथन नहीं है। भैया! तेरी चीज ज्ञाता-दृष्टा है, ज्ञानप्रकाशमय है। तो क्या अकेला ज्ञानमय आत्मा है? आत्मा में तो अनंत गुण है, अनंत गुण है। लेकिन क्या करे? भेद किये बिना समझाया जाता नहीं, परन्तु भेद को अंगीकार करना नहीं। यह बात बड़ी कठिन, कभी सुनी न हो। दया पालनी, व्रत पालना, उपवास किया, जाओ जिंदगी पूरी।

यहाँ तो कहते हैं, व्यवहार अनुसरण करने योग्य नहीं है। '**इस निश्चय को अंगीकार**

करने के लिये व्यवहार द्वारा उपदेश देते हैं;...' निश्चय का भान कराने के लिये व्यवहार का उपदेश है। व्यवहार आदरणीय है नहीं। समझ में आया? तेरा आत्मा शरीर से भिन्न है। ये शरीर नहीं है? यह गाय का जीव, मनुष्य का जीव। तो क्या गाय का जीव है? जीव तो जीव का है। मनुष्य जीव, पर्याप्त जीव, अपर्याप्त जीव, काला, काली गाय का जीव, सफेद गाय का जीव। तो काली गाय का जीव है? जीव तो जीव है। परन्तु उसे समझाने को जीव को समझाने को शरीर की अपेक्षा लेकर समझाया है। परन्तु शरीर की अपेक्षा लेकर अन्दर समझ में आता है ऐसा नहीं। व्यवहार से समझाया कि तेरा आत्मा यह है। उसको व्यवहार अंगीकार नहीं करना, निश्चय को अंगीकार करना। वह उपदेश व्यवहार का, निश्चय अंगीकार करने को दिया है। व्यवहार को अंगीकार करने को दिया नहीं।

(श्रोता :- प्रमाण वचन गुरुदेव!)

वीर सं.-२४८८, श्रावण वद-६, मंगलवार, दि. २१-८-१९६२,
सातवाँ अधिकार, प्रवचन नं. १३

मोक्षमार्गप्रकाशक, सप्तम अध्याय चलता है। शिष्य का प्रश्न है। व्यवहार और निश्चय का कथन चला। शास्त्र में जो निश्चय से स्वद्रव्य आश्रय बात कही है वह सत्यार्थ है, वह उपादेय है। और शास्त्र में जो व्यवहारनय की मुख्यता से बात कही है वह असत्यार्थ है और हेय है। देखो, शिष्य का प्रश्न। तो एक निश्चयनय का ही उपदेश करना था। यदि व्यवहारनय हेय और असत्यार्थ है तो एक ही नय का उपदेश करना था, दो नय का उपदेश शास्त्र में क्यों कहा? बराबर है? शेठी! एक ही नय का करना था, जो उपादेय है वही करना था। असत्यार्थ कहो, हेय कहो, छोड़नेयोग्य कहो, और उसका उपदेश करना, उसका क्या कारण है? तुम कहते हो ऐसा प्रश्न समयसार में ८वीं गाथा में हुआ है और उसका उत्तर भी दिया है।

अनार्य मनुष्य उसकी भाषा बिना समझ सकता नहीं। अनार्य को उसकी भाषा से समझावे तो वह समझ सकता है। स्वस्ति ऐसा कहा, स्वस्ति। स्वस्ति क्या अनार्य मनुष्य को स्वस्ति की खबर नहीं। क्या है यह? क्या कहते हैं? टगटग मेंढे की भाँति